औद्योगिक समाज में गैर-कानूनी सामाजिक सेवाएँ : एक अध्ययन

(औरंगाबाद जिले के विशेष संदर्भ में)

महात्मा गांधी अंतरराष्ट्रीय हिंदी विश्वविद्यालय, वर्धा के संस्कृति विद्यापीठ के अंतर्गत
एम.फिल उपाधि हेतु प्रस्तुत लघु शोध-प्रारूप

सत्र-2013-2014

शोध-निर्देशक

डॉ. नृपेन्द्र प्रसाद मोदी
विभागाध्यक्ष
अहिंसा एवं शांति अध्ययन विभाग

शोधार्थी

जोगदंड शिवाजी रघुनाथराव
एम.फिल पं.सं-2013/03/210/012
अहिंसा एवं शांति अध्ययन विभाग

अहिंसा एवं शांति अध्ययन विभाग
संस्कृति विद्यापीठ
महात्मा गांधी अंतरराष्ट्रीय हिंदी विश्वविद्यालय

(संसद द्वारा पारित अधिनियम 1997 क्रमांक 3 के अंतर्गत स्थापित केन्द्रीय विश्वविद्यालय)

गांधी हिल्स, पोस्ट हिंदी विश्वविद्यालय,वर्धा-442005 (महा)

प्रस्तावना

वर्तमान में समाज औद्योगिकता से उत्तर औद्योगिकता की ओर अग्रसर है, इस कारणवश हमारे समाज की परम्परागत रुढी, प्रथा, सामाजिक सेवाएँ, सामाजिक संस्थाओं आदि के रचना में परिवर्तन आ रहा है। समाज पर पूंजीवादी व्यवस्था का प्रभाव और पूंजीवादियों के औद्योगिक जाल में समाज फंसता जा रहा हैं। इसको सुधीश पचौरी ने "पाप्युलर कल्चर"[1](Popular Culture) के रूप में परिभाषित किया है। उन्होंने यह बताया है कि हमारे त्यौहार उत्तर-औद्योगिक समाज (Post Industrial society) के उत्पादित सेवाओं पर निर्भर है। परिणामस्वरूप हमारे प्राचीन समय से चले आ रहे सामाजिक संस्थाओं में भी परिवर्तन आ रहा है। मानव सभ्यता के उद्विकास (Evolution) से पता चलता है कि मनुष्य दिनों-दिन विकास की सीढियाँ चढ़ता जा रहा है इसका समाज पर सकारात्मक और नकारात्मक दोनों तरह का प्रभाव दिखाई दे रहा है। समाज का उत्तर औद्योगिकता में प्रवेश ही मानव जीवन शैलियों में परिवर्तन लाया है.इसका उदाहरण है कि वर्तमान जो विकसित राष्ट्रों में तलाक (divorce) के आँकड़ों में वृद्धि पायी जा रही है। भारत एक विकासशील राष्ट्र है भारत के नगरीय और औद्योगिक क्षेत्र में तलाक की मात्रा ग्रामीण क्षेत्रों से कई ज्यादा पायी जा रही है। इसका कारण हम औद्योगिक समाज और उत्तर-औद्योगिक समाज में सामाजिक सेवाएँ और गैर-कानूनी सामाजिक सेवाएँ के उपयोग को माना जा सकता है. परिवार जो एक संयुक्त संस्था का रूप था धीरे-धीरे टूट रहा है।

औद्योगिक समाज में वस्तुओं का मूल्य यानी कीमत श्रम के आधार पर निर्धारित किया जाता था वो उत्पादन में जितना श्रम लगता था उसी के आधार पर वस्तु का मूल्य तय किया जाता था लेकिन अब श्रम आधार और अधिरचना के स्वरूप में भी परिवर्तन आ गया है। कभी किसी भी समाज की जटिलताएँ श्वेत और श्याम में मिश्रित होता है लेकिन आधुनिक समय की जटिलताओं में अब श्वेत और श्याम में हम अपने समाज को चित्रित नहीं कर सकते बल्कि अब समय विभिन्न प्रकार से उपजी जटिलताओं का समय है इस समय के भी समाज में वैध और गैर-कानूनी स्वरूप की अधिरचना विकसित हुई और इनका स्वरूप काफी संगठनात्मक (Organized) हुआ है यह चिंतनीय समस्या के रूप में हमारे ज्ञान आधारित समाज के लिए चुनौती खड़ी करता है।

इस पर ज्यां एफ.ल्योतार "उत्तर आधुनिक परिदृश्य में अपनी प्रश्नार्थकता की विशेषता के कारण प्राधिकरण किसी खास धरातल पर स्थिर नहीं रहता है, कभी वह धर्म तो कभी तर्क को आधार

---

[1]पचौरी, सुधीश 'पापुलर कल्चर' राधाकृष्ण प्रकाशन

बनाकर चलता है या फिर दोनों के साथ में दिखाई देता है किसी वैश्विक धरातल पर वह समान नहीं होता। वे अपनी किताब *'द पोस्टमॉडर्न कंडीशन'* में कहते है कि उत्तर आधुनिकता महाआख्यानों (Meta-narretive) से अविश्वास (Incredufity) की ओर जा रहा है, आधुनिकता ने यह स्वीकार कर लिया कि सत्य प्रगति और स्वतंत्रता पर आधारित मानवीय तर्क की स्वायता की व्यापक जांच में वह असमर्थ रही है।"[1]

गिडेन्स (Giddens) ने अमेरिका और युरोप के उद्योगों का एक सर्वेक्षण प्रस्तुत किए हैं इसके आँकड़े बताते है कि उद्योग के इस परिवर्तन ने एक नये समाज को जन्म दिया जिसे किसी भी अर्थ में औद्योगिक समाज (Industrial society) नहीं कहा जा सकता। कुछ विश्लेषकों का तर्क है कि यह समाज औद्योगिकता से परे है। इसे कभी भी औद्योगिक नहीं कहा जा सकता।कुछ विद्वानों के अनुसार यह उत्तर-औद्योगिक समाज (Post-Industrial Society) है, कुछ के अनुसार नया समाज सूचना युग (Imformation age) है और कुछ ने तो इसे नई अर्थव्यवस्था (New Economy) का समाज कहते हैं।

उत्तर आधुनिक चिंतन पर डेनियल बेल की कृति *'दि कमिंग पोस्ट इंडस्ट्रियल सोसायटी'* (The Coming Post Industrial Society) (१९७३) का गहरा प्रभाव माना जाता है। बेल ने 'उत्तर-औद्योगिक समाज' को 'ज्ञान समाज' (Knowledge Society) कहा है। भारत को उदारीकरण की प्रकिया के कारण जो उत्तर-औद्योगिक समाज (Post Industrial Society) के रूप व्याख्यायित किया गया है। इस में बेल ने ज्ञान समाज की जो व्याख्या प्रस्तुत की है। "उसमें वह संपत्ति के स्वामित्व को महज कानूनी अर्थ में विवेचित करते हैं।"[2] वह मानता है कि नई प्रौद्योगिकीय खोजों और बड़े पैमाने पर ज्ञान के संबंधित गतिविधियों के विस्तार के कारण श्रमजीवियों की खपत बढ़ी है। बड़े-बड़े कारखानों की सीधे खरीद या कारखानों का छापेमार ढंग से स्वामित्व हरण करने की प्रवृति भी सामने आई है। बाजार में सट्टेबाजी और शेयरबाजी का दखल बढ़ा है। विश्व मैन्यूफैक्चरिंग व्यवस्था का उदय हुआ है। परिणामत: 'नालेज वर्कर' (Knowledge Workers) की भूमिका का महत्व बढ़ गया है।"[3] यह ऐसा समाज है जब अमेरिका भयानक मंदी के दौर से गुजर रहा था।भारी उद्योग में ऑटो, टायर,स्टील के क्षेत्र में 1980 के मध्य राज्य के उद्योग तबाह हो गए। रोजगार के नए अवसर अब सस्ती तकनीकी और कम उत्पादन के क्षेत्रों में केंद्रित हो गए हैं।

---

[1]Taylore, V.C. & Winguest C.E. Encyclopaedia of Postmodernism p. 24

[2]Bell, D. (1973). The coming of Post Industrial Society.p.212.

[3]Bell, D. (1973). The coming of Post Industrial Society p.343.

डेनियल बेल का मानना है कि आधुनिकता के दौर में विज्ञान सिलसिलेबार ढंग से प्राकृतिक और सामाजिक परिवेश पर नियंत्रण हासिल करने की कोशिश करता है। औद्योगिक और उत्तर-औद्योगिक समाजों में मूल अंतर नई खोजों को लेकर है। उत्पादन के संबंधों में मूलगामी तौर पर इससे कोई अंतर नहीं आता। वस्तुतःयह अधिरचना के परिवर्तनों तक ही अपनी समझ को सीमित रखता है जबकि किसी युग की अवस्था के परिवर्तन पर विचार करते समय आधार में घटित परिवर्तनों को भी ग्रहण करना चाहिए।

समाजशास्त्रियों ने उत्तर-औद्योगिकता पर काफी चिंतन किया है इस देश में नहीं, बाहर के देशों में भी। उनके निष्कर्ष एक समान नहीं है। उत्तर-औद्योगिक समाज में आर्थिक और सामाजिक दोनों क्षेत्रों में बहुत बड़ा अंतर आया है। सभी स्वीकार करते है कि 18 वी शताब्दी की औद्योगिक क्रांति इस युग में आकर एकदम पलट गई है। बहुत स्पष्ट है कि उद्योग में उत्पादन के स्थान पर सेवाओं की प्रमुखता हो गई है। इसे समझने के लिए पहले औद्योगिक समाज और उत्तर-औद्योगिक समाज के अंतर को समझना होगा जिसका प्रयास इस शोध में किया जाएगा।

एस. एल. दोषी ने अपनी किताब *'आधुनिकता, उत्तर आधुनिकता एवं नव समाजशास्त्रीय सिद्धांत'* में कहते है कि बीसवीं शताब्दी के छठे दशक के बाद संसार में ऐसी हलचल मची कि संस्कृति का मानो विस्फोट ही हो गया हो। आर्थिक एवं सामाजिक संस्थाओं ने संस्कृति को नये-नये मूल्यों में प्रस्तुत किया। बाजार से लेकर मंदिर और चर्च सभी में संस्कृति की धूम मच गई। हमारे देश में जैसा कि हम देखते है सारे ओर संस्कृति का चमत्कार देखने को मिलता है। नित नये देवताओं का अवतार हो रहा है, जो त्यौहार लुप्त हो गये थे, सतह पर आ गये हैं। जो त्यौहार चले आ रहे है उनमें नई धूमधाम मची है। हम यह देखते है कि राज्य और राजनीतिक शक्तियाँ भी इस नई संस्कृति को धार दे रही है। इस सबका परिणाम यह है कि आज संस्कृति बाजार में बिक रही है "कला कला के लिए"[1] (Art for the sake of Art) है "कला स्वयं के सुख के लिये है" जैसे मुहावरे आज अतीत में खो गये हैं। अब संस्कृति तथा अर्थ व्यवस्था गड्मड हो गये हैं, दोनों का स्तरीकरण हो गया है इस पर फ्रेडरिक जेमेसन कहते है कि "आज जो हुआ है वह यह है कि सौन्दर्यपरक उत्पादन वस्तु उत्पादन के साथ जुड़ गया है। अब जैसे ही किसी फैशन का उभार होता है, देखते फैशन की वस्तु बाजार में आ जाती है। इस तरह सौन्दर्यपरकवस्तु अर्थ व्यवस्था के साथ जुड़ गई है।"[2]

---

[1] दोषी,एस.एल. 'आधुनिकता, उत्तर आधुनिकता एवं नव समाजशास्त्रीय सिध्दांत' पृ.309

[2] Callinicos, A. 'Against Post-Modernism: A Marxist critique; Polity Press, 1989.

उत्तर-औद्योगिक समाज की कुछ विशेषताओं का भी उल्लेख कर सकते है। इसमें जो संस्कृति है वह केवल ऊपरी प्रतिबिम्बों और छवियों पर निर्भर है। इसमें कहीं भी यथार्थता नहीं हैं। इस समाज में अलगाव की भावना बहुत अधिक है और जो कला हमें समाज में देखने को मिलती है, वह किसी भी प्रकार से भावोत्पादकता को पैदा नहीं करती। ऐसा लगता है, जैसे लोगों की आत्मा मर गई है। उनकी संवेदशीलता समाप्त हो गई है। इसका स्वरूप हमें अपने दैनिक जीवन में समाचार पत्रों में प्रतिदिन हम छोटी-मोटी दुर्घटनाओं का विवरण पढ़ते रहते है। कहीं कोई मरा और कहीं किसी ने किसी को बेमतलब मार दिया। यह सब हमारे लिए अवैयक्तिक है, इसका कारण यह है कि संपूर्ण समाज का विखंडन हो गया है। इसका मतलब यह है कि सबकी अपनी निजी दुनिया है। दूसरों की दुनिया से उसे कोई मतलब नहीं है। इस समाज में अतीत और वर्तमान ही इस तरह गड्मड हो गये है कि इन्हे पृथक करना बड़ा कठिन हो गया है।

उत्तर-औद्योगिक समाज के साथ एक नए प्रकार का तकनीकी तंत्र जुड़ा हुआ है औद्योगिक समाज में तकनीक हुआ करती थी उसका उद्देश्य उत्पादन बढ़ाना था लेकिन आज तकनीक आई है वह ओर प्रकार की है वह मांग को बढ़ाती है जैसे टी.व्ही., सोशल वेब द्वारा, इंटरनेट, रेडिओ आदि के माध्यमों से प्रचार करके और उत्पादन बढ़ता है। इस पर डेनियल बेल कहते है कि "उत्तर-औद्योगिक समाज में कंप्यूटर, डाटा बैंक; कंप्यूटरीकृत प्रशासनिक संरचना के द्वारा मास सोसायटी (Mass Society) के नियंत्रण की कोशिश की गई। परिणामत:ज्ञान के चरित्र में परिवर्तन आया।"[1] इस तरह से यह समाज को अपने जाल में फंसाता चला जा रहा है। इस कारणवश बहुत सारे वैध और गैर-कानूनी सामाजिक सेवाओं का निर्माण हो रहा है।

[1]Bell, D. (1973). The coming of Post Industrial Society p.43-45.

शोध समस्यायीकरण

उत्तर-औद्योगिक समाज में सामाजिक सेवाओं के परिणाम स्वरूप पारंपरिक सामाजिक संस्थाओं तथा उनसे आपसी संबंधों में परिवर्तन हुआ है। ये परिवर्तन सिर्फ उत्पादन के तरीकों में जटिलता आने से घटित नहीं हुआ है, बल्कि बहुत हद तक उत्पादन संबंधों में एक नये किस्मों से बदलाव जो सही-सही आमूल भी दिखता है से घटित हुए हैं। भारी मशीनों की कम्प्यूटर से बनी नयी जुगलबंदी ने इन समाजों में कुशल और अकुशल मजदूरों की एक नई और स्पष्ट विभाजन श्रेणी को जन्म दिया है, जिसने श्रम से पारंपारिक अर्थ और उसमें खर्च होने वाली उर्जा को भी नये सिरे से परिभाषित करने की चुनौती हमारे सामने रखी है। सर्वहारा (Proleteriat) के स्थान पर सफेद कॉलर मजदूर वर्ग(कोग्नीलिएट) के इस नये उभार ने सामाजिक सेवाओं के स्वरूप पर भी एक विभाजकीय परिवर्तन डाला है। अब ये नई सामाजिक सेवाएँ पुराने तथा अधिक सभ्य समाज के लिए बनाये गये कानूनों से सामंजस्य और तालमेल नहीं बिठा पा रही हैं। ऐसे में हमारा शोध एक क्षेत्र विशेष में पनप रही नई उत्तर-औद्योगिक संस्कृति के इर्द-गिर्द पनप रही नई सामाजिक सेवाओं की प्रवृतियाँ की पहचान करेगा तथा उस में कानूनी और गैर-कानूनी समाजिक सेवाएँ होने के नये द्वंद्वों का सामाजिक अभिग्रहण पर भी अपना ध्यान रखने की कोशिश करेगा।

शोध परिकल्पना/उपकल्पनाओं का निर्माण

(Formulation of Research Hypothesis)

- उत्तर-औद्योगिक समाज में पनप रही सामाजिक सेवाएँ औद्योगिक समाज की सेवाओं से भिन्न है और इसमें परंपरागत सामाजिक संबंधों को बदल दिया है।
- नई सामाजिक सेवाओं ने कानूनी-गैर कानूनी द्वंद को बढ़ाकर सामाजिक अपराध को जन्म दिया है।
- पूंजी के नए स्वरूप में उत्पाद के रूप में सेवाओं की प्रमुखता हुई। औद्योगिक समाज और उत्तर-औद्योगिक समाजों में सेवाओं में स्पष्ट परिवर्तन आया है। इस शोध में इस परिवर्तन को रेखांकित करते हुए उसके स्वरूप एवं उससे उपजे नये सामाजिक अन्तरसंबंध की तलाश करेगा।
- नयी संरचना में सामाजिक सेवाएं एवं उससे बने सामाजिक अन्तरसंबंध पुराने ढांचे में फिट नहीं बैठता। ऐसे में यह शोध वैध और गैर कानूनी सेवाओं का अध्ययन करेगा। सामाजिक सेवा अब स्पष्टता से अपने परिक्षेत्र में प्रकट नहीं है अपितु वह विकेंद्रित होकर शहरी परिवेश एवं सूचना प्रौद्योगिकी में समाहित हो गई है।

शोध के उद्देश्य एवं महत्व

(Objectives and Importance of Research)

- ❖ 21 वीं सदी में भारत के उत्तर-औद्योगिक शहरों में पारंपरिक सामाजिक संस्थाओं में आनेवाले परिवर्तन का अध्ययन।
- ❖ उत्तर-औद्योगिक शहरों में गैर कानूनी सामाजिक सेवाओं का निर्धारण करना, पहचान करना और उनका वर्गीकरण करना।
- ❖ सामाजिक सेवाओं का उत्तर-औद्योगिक समाज पर पड़नेवाले प्रभावों का अध्ययन करना।

अध्ययन में प्रयुक्त प्रविधि (Research Mrthodology)

प्रयुक्त शोध अपनी प्रविधि में मात्रात्मक एवं गुणात्मक (Quantitative and Qualitative) चरित्रों से संपुष्ट है गुणात्मक प्रविधि के अंतर्गत आकड़ा संग्रहण हेतु निदर्शन पद्धति (Sampling) का सहारा लिए जाएगा। इसके अंतर्गत 50 प्रतिदर्शक का चयन किया जाएगा जो औरंगाबाद जिले के औद्योगिक समाज में स्थिति होगा। प्रतिदर्श चयन के लिए उद्देश्यपूर्ण निदर्शन (Purposive Sampling) प्रविधि का सहारा लिए जाएगा इसके साथ की गुणात्मक प्रविधि के अंतर्गत अवलोकन पद्धति (Observation Method) एवं साक्षात्कार प्रविधि (Interview Method) का भी सहारा लिया जाएगा ताकि सामाजिक स्तर, दैनिक जीवन स्तर और सामाजिक सेवाओं के प्रति आकड़े एकत्रित किए जा सके। अवलोकन पद्धति के अंतर्गत अर्ध्द-सहभागी (Quasi-participant) अवलोकन पद्धति का सहारा लिया जाएगा। साक्षात्कार पद्धति के लिए साक्षात्कार मार्गदर्शिका (Interview Guided) का उपयोग किया जाएगा; इसके अंतर्गत असंरचित (Unstructured) साक्षात्कार का उपयोग किया जाएगा। साक्षात्कार के लिए एक प्रश्नावली(Questionnaire) भी तैयार की जाएगी इसमें खुली(Open) एवं बंद(Closed) दोनों तरह के प्रश्न लिए जाएंगे।

उपर्युक्त प्रविधियों से एकत्रित किए गए आकड़ा विश्लेषण (Analysis) विश्लेषणात्मक (Analytical) प्रविधि एवं विमर्श विश्लेषण (Discourse Analysis) प्रविधि से किया जाएगा। जहाँ कहीं भी संदर्भ का प्रयोग किया जाएगा वहाँ फुटनोट (Footnote) का प्रयोग किया जाएगा; इंडनोट (Endnote) का प्रयोग नहीं किया जाएगा। संदर्भ लेखन के लिए ए.पी.ए.(American Psychological Association) पद्धति का प्रयोग किया जाएगा।

साहित्य पुनरावलोकन :

Pierre Bourdieu, *Distinction,* Atlantic pub. 2012

पिआरे बोरदियू अपनी किताब में निम्न विवरण करते है कि संरचनावाद के क्षेत्र में यूरोप खास तौर पर फ्रांस में एक नये क्षितिज का उदभव रॉबर्ट वुथनीव (Robert Wuthnow) और पिआरे बोरदियु (Puerre Bourdieu) हैं। संरचनावाद के इन नवीन क्षितिज को सांस्कृतिक संरचनावाद (Cultuural structuralism) का नाम दिया गया है। आधुनिक सामाजिक विचारधारा पर, चाहे वह मानवशास्त्र हो या समाजशास्त्र, सांस्कृतिक संरचनावाद का बहुत बड़ा प्रभाव है। सांस्कृतिक संरचनावादी अनेक तरह के विश्लेषण प्रस्तुत करते है। विश्लेषण की विभिन्नता होते हुए भी बुनियादी रूप से इन सबका प्रकरण एक समान ही है। संरचनावादियों का मानना है कि सतह पर दिखने वाली घटनाओं के अन्दर एक निश्चित संरचना बनी होती है। इस संरचना को नियमों की एक कड़ी के रूप में समझा जा सकता है। ये नियम ही विभिन्न प्रकार की आनुभविक, स्थितियों का विश्लेषण करने में सहायक होते है। दूसरे शब्दों में आनुभविक रूप से देखी जाने वाली घटनाये, संरचना के तर्क द्वारा निर्मित की जा सकती है। कुछ लोग इस आंतरिक संरचना को मनुष्य के मस्तिष्क की देन मानते है और कुछ इसे सांस्कृतिक उपज मात्र समझते है।

विशुद्ध संरचनात्मक विश्लेषण का प्रभाव भाषा व साहित्य में अधिक देखने को मिलता है। थोड़े समय के लिए यह विश्लेषण मानवशास्त्र व समाजशास्त्र में लोकप्रिय रहा। वर्तमान संरचनावादी सिद्धांत जो उपलब्ध है। उनकी लोकप्रियता कम हो गयी है। एल. स्ट्रास ने दुर्खाइम को उनके सिर के बल खड़ा कर दिया था, लेकिन सांस्कृतिक संरचनावादियों ने उन्हें पुन: अपने पाँवों पर खड़ा कर दिया है। ये संरचनावादी, प्रतीकात्मक व्यवस्था की संरचना पर जोर देते है। सांस्कृतिक संरचनावादी दुर्खाइम से बहुत कुछ उधार लेते है, लेवी स्ट्रास की अंतर्दृष्टि प्राप्त करते है और फ्रांसिसी समाज की परम्पराओं को सांस्कृतिक संरचना से जोड़ते है।

सांस्कृतिक संघर्ष सिद्धांत (Pierre Bourdieu)

बोरदियू के समाजशास्त्र का केन्द्रीय आधार समाजिक की है। इन वर्गो के साथ जुड़े हुए सांस्कृतिक स्वरूपों (Cutural Forms) को वे अपने विश्लेषण का मुख्य मुद्दा बनाते है संक्षेप में कहा

जाए तो बोरदियू, मार्क्स और वेबर के सिद्धांत का सम्मिश्रण करते है। वे मार्क्स की वस्तुनिष्ठ वर्ग की अवधारणा को लेकर उसे वेबर के विश्लेषण के साथ उत्पादन साधनों से जोड़ते है। इस प्रकार बोरदियू, मार्क्स और वेबर की सामंजस्य संरचना को जोड़कर फ्रांस के संरचनावाद के संदर्भ में देखते है। बोरदियू के अनुसार वर्ग क्या है? इस प्रश्न का उत्तर देने के लिए बोरदियू पूंजी को चार भागों में बांटते है।

(१)**आर्थिक संपत्ति** (Economic Capital)- इसके अंतर्गत वह सम्पूर्ण संपत्ति आती है, जिसके माध्यम से उत्पादन होता है। पैसा, भौतिक वस्तुएँ ऐसी है, जिनके द्वारा वस्तुओं और सेवाओं को उपलब्ध किया जाता है।

(२)**सामाजिक संपत्ति** (Social Capital)- ये वे सामाजिक परिस्थितियाँ है जिनके माध्यम से विभिन्न समूहों के साथ संपर्क किया जा सकता है। सामाजिक जाल बनाने में सामाजिक संपत्ति उपयोगी होती है।

(३)**सांस्कृतिक संपत्ति** (Cultural Capital)- इसके अंतर्गत कुशलता, शिष्टाचार, भाषा संबंधी पद्धतियाँ, शैक्षणिक क्षमता, जीवन शैली आदि आते है।

(४)**प्रतीकात्मक संपत्ति**- आर्थिक संपत्ति, सामाजिक संपत्ति तथा सांस्कृतिक पूंजी को वैधता देने के लिए प्रतीक को काम में लिया जाता है। ऐसी अवस्था में प्रतीक ही संपत्ति है।

संपत्ति के इन चारों प्रकारों को बनाने के बाद बोरदियू वर्ग की अवधारणा को स्पष्ट करते है। सभी वर्गों मे संपत्ति के प्रकार कम या ज्यादा रूप में अवश्य पाये जाते है अर्थात प्रभुत्व वर्ग (Dominant Class) में आर्थिक संपत्ति, सामाजिक संपत्ति, सांस्कृतिक और प्रतीकात्मक संपत्ति सबसे अधिक होगी। मध्यम वर्ग के पास संपत्ति का यह स्वामित्व अपेक्षाकृत रूप से कम होगा और निम्न वर्गों के पास संपत्ति के ये स्त्रोत न्यूनतम होंगे। ऐसा होना संभव है कि प्रमुख वर्ग में कुछ ऐसे द्वंद समूह होंगे जिनके पास, संपत्ति कम होगी। दूसरी ओर निम्न वर्गों में कुछ इने-गिने आदमी ऐसे हो सकते है जिनके पास संपत्ति के उपरोक्त प्रकार अधिक हो।

जब बोरदियू वर्ग और संपत्ति का विश्लेषण करते है तब वे कहते है कि सामाजिक स्तरीकरण में वर्गों कि यह गैर-बराबरी, खड़ी स्पष्ट दिखाई देती है। तीन में से प्रत्येक वर्ग अपनी सांस्कृतिक और प्रतीकात्मक संस्कृति के कारण एक समान संस्कृति को पैदा करता है। उसे बोरदियू वर्ग संस्कृति(Class

Cultural) कहते है। बोरदियू के अनुसार यह एक आश्रित चर है जो लोगों के बीच सम्बन्धों को निर्धारित करता है।

बोरदियू की विशेषता यह है की प्रत्येक वर्ग की सांस्कृतिक विशिष्टता को वे निकालते है। एक ही वर्ग के लोग समान विचारधारा, अनुभूति और व्यवहार के भागीदार होते है। वर्ग के इन लोगों में जो समान व्यवहार पाया जाता है, बोरदियू इसे हेबिटस (Habits) यानि समूहिक अचेतना (Collective Unconscious) कहते है। यह सामूहिक अचेतना ही एक निश्चित वर्ग के लोगों की भाषा, वेषभूषा, शिष्टाचार आदि निश्चित करती है। उदाहरण के लिए प्रभुत्व वर्ग का स्थान, स्वतन्त्रता और विलासिता की ओर होता है। जबकि निम्न वर्ग के सामने अस्तित्व को बनाए रखने की समस्या होती है।

अंततः हम कह सकते है की यूरोप यानि पेरिस के संरचनावाद पर बोरदियू का प्रभाव सबसे अधिक है। बोरदियू ने वर्ग संघर्ष पर एक ऐसा अवधारणात्मक माडल दिया है जिसमें मार्क्स, वेबर और दुर्खिम तीनों के समाजशास्त्र सम्मिलित है। अपने सिद्धांत में बोरदियू ने व्यक्ति के वर्ग जनित व्यवहार की चर्चा करते हुए किसी तरह का विशद-विश्लेषण नहीं दिया है। दुर्खिम को उन्होने पाँव के बल खड़ा किया है और वे कहते है व्यक्ति की वर्ग में जो स्थिति है वहीं उसके व्यवहार को निर्धारित करती है। दूसरी ओर वे संरचनावाद के प्रतीकात्मक पहलू को बराबर अपने सिद्धांत में सम्मिलित करते है। यूरोप के संरचनावाद में बोरदियू का सांस्कृतिक संरचनावाद एक महत्वपूर्ण घटना है।

सुधीश पचौरी *पापूलर कल्चर के विमर्श*, नई दिल्ली, वाणी प्रकाशन (2011)

पापूलर कल्चर के विमर्श: इस किताब में सुधीश पचौरी ने समकालीन भारतीय समाज में 'पापूलर कल्चर' नित्य उपयोग हो रहा है। ऐसी संस्कृतियाँ अब बहुत कम बची हैं जो इस उपभोक्तावाद की शिकार न हों। 'पापूलर कल्चर' को लोग 'पतित संस्कृति' 'उपसंस्कृति' कह कर निन्दित करते है, जो किसी 'पुराणपंथी' के मारे होते है उनकी प्रतिक्रियाएँ 'नैतिक दारोगाई' की ओर धकेलती है। उच्चतर अध्ययन के संस्थानों में सांस्कृतिक विमर्श एक महत्वपूर्ण विषय के रूप में पढ़े-पढ़ाये जाते है। पापूलर संस्कृति के पाठ को समझने के लिए सांस्कृतिक अध्ययनों के विमर्शो, उनमें उपलब्ध पाठ-विग्रह और विखंडन के तरीकों का पढ़ना अनिवार्य माना जाता है। भारतीय समाज में उपलब्ध 'पापूलर कल्चर' के अनेक पहलुओं, उसके अनेक अनुषंगों और छटाओं की समीक्षा है।

फैशन, ग्लैमर, निर्बाध कामनाएँ, नये किस्य का अकेलापन, भीड़, उन्माद, हिंसा, सैक्स, लालच, स्वार्थपरता, निजता और नयी अंधी स्पर्धा ने मनुष्य की जीवन शैली और जीवन-चर्या पर गहरे प्रभाव डाले हैं। यह किताब इन तमाम पहलुओं से गुजरती है और पापूलर के नये विमर्शो से परिचित कराती है।

सुधीश पचौरी,*फासीवादी संस्कृति और सेकूलर पाप-संस्कृति,* नई दिल्ली राधाकृष्ण प्रकाशन-2005।

इस किताब में सुधीश पचौरी ने वर्तमान समाज दिखने का प्रयास किया है वह कहते है कि उत्तर आधुनिक समय में 'सांस्कृतिक राजनीति' एक संघर्ष-क्षेत्र बन उठा है। 'सांस्कृतिक राजनीति' करके 'सांस्कृतिक राष्ट्रवाद,' मूलतः फासिस्ट संस्कृति और सत्ता बनाने को प्रयत्नशील है। उसकी मिसालें यत्र-तत्र-सर्वत्र दैनिक भाव से बनती है। वे इसके लिए 'पापूलर कल्चर' के चिह्नों का सहारा लेते है, माध्यमों का सहारा लेते है, जनता में पापूलर भावपक्ष का निर्माण कर उसे एक निरंकुश अंधराष्ट्रवादी भाव में नियोजित करते रहते है। इस परिणामस्वरूप इसके प्रतिरोध में कार्यरत प्रगतिशील सेकूलर और मानतावादी विचारों और सांस्कृतिक उपादानों, चिन्हों का लगातार क्षय नजर आता है। कुछ नए प्रतिरोधमुलक प्रयत्न नजर आते हैं तो अपने स्वरूप एवं प्रभाव क्षमता में 'हाई कल्चर' (एलीट) बनकर आते है, आम जनता का उनसे कोई आवश्यक संवाद-संबंध नहीं बनता।

सारा 'पब्लिक स्पेस' फासिस्टिक सांस्कृतिक राष्ट्रवादी तत्त्वों के लिए खुला छूटा दिखता है जिसे वे दिन-रात भरते रहते हैं, यदि आम जनता में, विवेक की जगह अन्ध पूजा भाव, संवाद की जगह बदले और हिंसा का भाव रहता है तो इसलिए भी कि विकासहीनता से उपजी आत्महीनता और ग्लोबलाइजेशन के मुक्त कामना-संसार से उपजे अवसरवाद के बीच फँसा है। एक ओर सांस्कृतिक राष्ट्रवाद अपनी अन्धताओं की लाठियों से इसे अपने नियन्त्रण में लेना चाहती है। दूसरी ओर ग्लोबलाइजेशन की प्रबल आर्थिक-राजनीतिक-सांस्कृतिक शक्तियाँ उसे उसके अन्ध लोक में घुसकर सीधे 'मुक्त' कर देने स्थिति पैदा करती हैं। देखते-देखते एक विराट अखिल भारतीय 'जेनरेशन नेक्स्ट' सामने उभर आई है जो मीडिया प्रेरित, बाजार मित्र और उसकी उत्तर आधुनिक ज्ञान-दशाएँ एवं ज्ञान-सरणियाँ हैं जो उसे किसी तरह के तत्त्ववाद, केन्द्रवाद और अतीत-जीवता से मुक्त कर उपभोक्ता क्षेत्र में आ रही है।

मनोरंजन उद्योग इस बदलाव का बड़ा माध्यम बन रहा है। फ़िल्में,टीवी सीरियल, अख़बार, विज्ञापन, एफएम रेडियों, एल्बमें, गानों के रिमिक्स, रेगे, टैप, भंगड़ा आदि मनोरंजन के बहुतसे रूप पाप-कल्चर के विराट वातावरण को बनाते हैं जिनमें शामिल युवा क्षेत्र अपनी अभिव्यक्ति करता है, और इस तरह 'पापूलर -कल्चर' के एक ही 'संलग्नकारी' (इन्क्लूसिव) और 'मुक्तकारी' (एक्सक्लूसिव), बहुमुखी, बहुस्तरीय द्वन्द्वात्मकता में सक्रिय होता है। वह कथित भक्ति और अध्यात्म के इस देश में 'मैटीरियल मैन'बनता है और पापूलर कल्चर उसकी अभिव्यक्ति का माध्यम बनती है। इसी में वह अपना स्वत्व अपना हस्तक्षेप संभव पता है। उसकी इस मुक्ति-कामना पर सबसे पहले तत्त्ववादी फासिस्ट हमले करते हैं। वे अपनी सत्ता के लिए खतरा समझते हैं। वह है भी, लेकिन वह चालाकी से इन ने औजारों का सहारा भी लेते हैं। सेकूलर विमर्श इस पापूलर क्षेत्र में आने से भी डरता है।

इसीलिए राजनीतिक सेकूलर सत्ता सम्भव तो हो सकती है लेकिन 'पब्लिक स्फीयर' तत्ववाद की अन्ध पूजा से भरा रहता है; इसे हम रोजाना के सत्ता समर्थित सांस्कृतिक इशारों में, विविध दलों के कार्यों में देख सकते हैं। सब मिलकर वे मुक्ति के नए जनतंत्र को तुरंत मर्यादित करने पर तुल जाते हैं।

सैक्स, आनन्द, सुख, उपभोग, ग्लोबल नागरिकता, स्वत्व-निजत्व की चिन्ता आदि वे नए भावबोध हैं जो दबे हुए, दमित सौक्सवाले समाज को खोलते है ये 'पापूलर कल्चर' के नए तनाव बिंदु हैं। वह उन्हें बराबर खोलती है। उन्हें 'क्रिटीकल क्षेत्र' में लाती है।

पचौरी ने कहा है कि 'कल्चर थियरी' इन्ही विमर्शों में से एक है जो 'पापूलर कल्चर' को गम्भीरता से देखती है। इस किताब में 'पापूलर कल्चर' के रूपों एवं क्षेत्रों को समझने की कोशिश किया है। 'पापूलर कल्चर' चूँकि मूलतः और अंततः किसी भी तरह के तत्त्ववाद के विपरीत कार्य करती है। इसलिए वह हमेशा केन्द्रवाद, तत्त्ववाद और फासीवाद के खिलाफ जगह बनती है और उसके जनतंत्र के विस्तार की माँग करती है। इस क्रिटीकल जगह को तत्त्ववादियों के हड़पने के लिए यों ही नहीं छोड़ा जा सकता। इस जगह भी संघर्ष करना होगा क्योंकि यह अब निर्णायक क्षेत्र बन उठा है। इसमें मार्क्सवाद और उससे बाहर की बहसें है तो समकालीन जीवन में 'पापूलर क्षणों' के अनुभवों को देखने की कोशिश भी है।

पूरनचन्द्र जोशी,*परिवर्तन और विकास के सांस्कृतिक आयाम*, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली,1999

जोशी ने इस किताब में भारतीय सामाजिक परिवर्तन और विकास के संदर्भ में कुछ बुनियादी सवाल और समस्यायों पर चितन किया है। इसमें जो एक ओर आधुनिक आर्थिक विकास और सामाजिक परिवर्तन को सांस्कृतिक आयामों पर और दूसरी और सांस्कृतिक जगत की उभरती समस्याओं के आर्थिक और राजनीतिक पहलुओं पर नया प्रकाश डालते है। इसमें सांस्कृतिक सवालों को अर्थ, समाज और राजनीति के सवालों को जोड़कर संस्कृतर्कियों तथा अर्थ एवं समाजशास्त्रियों के बीच सेतुबंधन के लिए नए विचार, अवधारणाएँ और मुलदृष्टी विचारार्थ प्रस्तुत करते है और दूसरी ओर उभरा हुए नए यथार्थ से विचार एवं व्यवहार-दोनों स्तरों पर जूझने में असमर्थ पुरानी बौद्धिक प्रणालियों, स्थापित मुलदृष्टियों और व्यवहारों की निर्मम विवेचना का भी आग्रह करती है। दूसरी शब्दों में, यह पुस्तक संस्कृति, अर्थ और राजनीति को अलग-अलग कर खंडित रूप में नहीं, बल्कि इन तीनों के भीतरी संबंधों और अंतर्विरोधों के आधार पर समग्र रूप में समझने के लिए प्रेरित करते है।

जोशी के अनुसार स्वातंत्र्योत्तर भारत में जो एक 'दोहरे समाज' का उदय हुआ है, उसका मुख्य परिणाम से नव-धनाढ्य वर्ग का उभार, जो पुराने सामंती वर्ग से समझौता कर सभी क्षेत्रों में प्रभुतावान होता जा रहा है और जिसका समाजिक दर्शन, मानसिकता एवं व्यवहार गांधी और नेहरु-युग के मूल्य-मान्यताओं के पूर्णतया विरुद्ध है। वह पश्चिम के निर्बंध भोगवाद, विलासवाद और व्यक्तिवाद के साथ निरंतर एकमेक होता जा रहा है, फलस्वरूप उसके और बहुजन समाज के बीच अलगाव ही नहीं, तनाव और संघर्ष भी विस्फोटक रूप ले रहे है। जोशी सवाल उठाते है कि भारतीय समाज में बन रहा तनाव और संघर्ष उसके अपकर्ष का करण बनेगा या इसी में एक नए पुनर्जागरण की संभावनाएँ निहित हैं?

प्रस्तुत शोध कार्य को हम निम्ननांकित अध्यायों उपाध्यायों में विभाजित कर अध्ययन करना चाहेंगे।

विषयानुक्रम

प्रस्तावना

अध्ययन विषय का परिचय

प्राकल्पना

अध्ययन का उद्देश्य एवं महत्व

अध्ययन में प्रयुक्त शोध प्रविधि

शोध की सीमाएँ एवं कठिनाईयाँ

साहित्य पुनरावलोकन

प्रथम अध्याय: सामाजिक सेवाएँ एवं सामाजिक संस्थाएँ

१.१ सामाजिक सेवाएँ

१.१.१ कानूनी सेवाएँ

१.१.२ गैर कानूनी सेवाएँ

१.२ सामाजिक संस्थाएँ

१.३ औद्योगिक समाज एवं उत्तर-औद्योगिक समाज

द्वितीय अध्याय: महाराष्ट्र में औद्योगीकरण: एक सिंहावलोकन

२.१ महाराष्ट्र के औद्योगीकरण

२.२ मराठवाडा के औद्योगीकरण का इतिहास

२ ३.औरंगाबाद जिले की पार्श्वभूमी

२.४ औरंगाबाद के औद्योगीकरण का इतिहास

तृतीय अध्याय: सामाजिक सेवाओं के परिवर्तन का अध्ययन

३.१ औद्योगिक समाज में सामाजिक सेवाओं के स्वरुप में परिवर्तन

३.२ उत्तर-औद्योगिक समाज में सामाजिक सेवाओं के स्वरुप में परिवर्तन

चतुर्थ अध्याय: क्षेत्र से प्राप्त सामग्री का विश्लेषण

उपसंहार

संदर्भ ग्रंथ-सूची

परिशिष्ट

संदर्भ ग्रंथ-सूची

Bell, D. (1973). *The coming of Post Industrial Society.* New York: Bisic books.

Bourdieu, P. (2012). *Distinction.* Atlantic: Atlantic Publisher and distribution private.

Callinicos, A. (1989). *Against Post-Modernism:A Marxist Critiquel* Combridge: Polity Press.

Gorz, A. (1982). *Farweel to the Working class:An Essay on PostInndustrial socialism.*Landan: Pluto Press.

Giddens, A.(1990). *The Consequences of Modernity.* Combridge: Polity Press.

Tourine, A. (1971). *The Post-Industrial society.* New York: Random house.

Winguest, C.A. (2001). *Encyclopedia fo Postmodernism.* Landan: Roullege.

एस.एल., दोषी. (2005). *आधुनिकता, उत्तरआधुनिकता एवं नव समाजशास्त्रीय सिद्धांत* . नई दिल्ली: रावत पब्लिकेशन.

डॉ.महाजन धर्मवीर तथा डॉ.महाजन कमलेश . (2008). *सामाजिक अनुसंधान की पद्धतियाँ.* दिल्ली: विवेक प्रकाशन.

पचौरी, सुधीश. (2004). *आलोचना से आगे.* नई दिल्ली: राधाकृष्णप्रकाशन.

पालीवाल, क. (2005). *उत्तर आधुनिकतावाद की ओर.* दिल्ली: आर्य प्रकाशन मंडल.

पचौरी, सुधीश. (2004). *पापुलर कल्चर.* नई दिल्ली: राधाकृष्ण प्रकाशन.

जोशी पूरनचंद्र. (1999). *परिवर्तन और विकास के सांस्कृतिक आयाम*. नई दिल्ली: राजकमल प्रकाशन .

पचौरी, सुधीश. (2011). *पापुलर कल्चर का विमर्श*. नई दिल्ली : वाणी प्रकाशन.